Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 SHISRRJ | Volume 2 | Issue 5 | ISSN : 2581- 6306

समाजिक परिवर्तन और आधुनिक महिलाएं

डॉ.अंग्रेज सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष,
अर्थशास्त्र, उपाधि महाविद्यालय पीलीभीत, उत्तर प्रदेश।
सन्ध्या राज
शोधार्थी, अर्थशास्त्र, एम0जे0पी0आर0यू0 बरेली, उत्तर प्रदेश।

सारांश – समाजिक परिवर्तन के फलस्वरूप महिलाओं में होने वाले परिवर्तन एक सतत् प्रक्रिया के रूप में देखे जाते है, जो निश्चित समय में होने वाली घटनाओं की श्रृंखला के आधार पर परिवर्तित होती रहती है, सामाजिक परिवर्तन के कारक इनमें परिवर्तन की निरन्तरता बनाये रखते हैं। सामाजिक परिवर्तन एक ऐसी प्रक्रिया है जो प्रायः दो केन्द्रों पर केन्द्रित रहती है प्रथम इसका स्वरूप और दूसरी उसकी दिशा। परिवर्तन चाहे सामाजिक हो या फिर अन्य कोई, वर्तमान स्थिति में परिवर्तन लाता है। सामाजिक परिवर्तनों में केवल सामाजिक ढांचे में परिवर्तनों को या फिर सामाजिक संबधों में आये बदलाब को ही सामाजिक परिवर्तनों में शामिल किया जा सकता है। विभिन्न शोधों एवं सर्वे के आधारों पर यह माना जाने लगा है कि 'सामाजिक ढॉचे या लोगो के आपसी व्यवहार में आये महत्वपूर्ण बदलाव ही सामाजिक परिवर्तन हैं।'

की वर्ड– सामाजिक, परिवर्तन, आर्थिक, परिवेश, धार्मिक, रीतिरिवाज।

समाजिक परिवर्तन का प्रभाव सभी क्षेत्रों पर पड़ता है चाहे वो शहरी महिलाएं हो या फिर ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करने वाली महिलाएं सभी की परिस्थिति पर सामजिक परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है, ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं मे सामाजिक परिवर्तन अपेक्षाकृत अधिक हुआ, क्योंकि वहाँ की महिलाएं शिक्षा प्राप्त करने के लिए बहुत अधिक जाग्रत हुई है, अनेकों ग्रामीण महिलाएं शिक्षा प्राप्त कर नौकरी कर रही है और आर्थिक संरक्षण प्राप्त करने के साथ–साथ अपने परिवार एवं पति का पूण सहयोग कर रही है, आज महिलाएं समान बराबरी का दर्जा प्राप्त किये हुए है। महिलाओं में शिक्षा के प्रति आई इस जागृति ने ही बाल–विवाह कम हुए है, सती प्रथा का अंत हुआ तथा विधवा विवाह प्रारम्भ हो सका है। आज महिलाएं चाहे व शहरी क्षेत्र से सम्बन्ध रखती हो या ग्रामीण क्षेत्र से वे चाहे किसी धर्म की हो प्रेत्यक क्षेत्र चाहे वो राजनीति का हो या

सामाजिक, धार्मिक हो या आर्थिक सभी में पुरूषों के कधे से कंधा मिलाकर कार्य करती है। आधुनिक मनोवैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि ग्रामीण महिलाएं पुरूष की शक्ति, योग्यता, विचार, रहन–सहन आदि में अन्तर किसी मौलिक या प्राकृतिक कारणों से नहीं है बल्कि मानव जाति के द्वारा बनाएं गये विभिन्न क्षेत्रों में सास्कृंतिक परिवेश के कारण है। इसके लिए समाज सुधारक हमेशा प्रयत्नशील रहते है और वे अपने लक्ष्य को पूर्ण भी करते है। इस तरह यह पता चलता है कि भारत में सामाजिक परिवर्तन के प्रभाव के कारण महिलाओं की परिस्थिति में काफी अन्तर और सुधार पाया जाता है।

सदियों से ग्रामीण महिलाओं को कभी भी एक स्वतंत्र व्यक्तित्व के रूप में समाज में स्थान नहीं दिया गया। वास्तविक जीवन और व्यवहार में देखा जाय तो ये महिलाएं अनेक सामाजिक, पारिवारिक और वैवाहिक समस्याओं से ग्रस्त हैं। भारत में विशेशकर ग्रामीण क्षेत्रों की महिलाओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति नहीं थी। इनकी सामाजिक स्थिति पुरूष की तुलना में बहुत नीची है ग्रामीण महिलाएं मुख्य रूप से पुरूष प्रधान–व्यवस्था, परदा–प्रथा तथा महिला पुरूष में असमानता आदि से ग्रस्त हैं। विगत वर्षो में ग्रामीण महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन की प्रक्रिया में तेजी आई है। इनकी स्थिति में अपेक्षाकृत सुधार हुआ है। यदि सैद्धान्तिक पक्ष का अध्ययन किया जाये तो ग्रामीण महिलाओं में आश्चर्यजनक परिवर्तन हुए हैं किन्तु व्यावहारिक रूप से देखने में परिवर्तन में विलम्ब दृष्टिगोचर होता है। किन्तु यह आशा की जाती है कि भविष्य में महिलाओं की स्थिति में आशातीत परिवर्तन और सुधार हो जायेगा।

सामाजिक परिवर्तन का महिलाओं की सामाजिक एवं आर्थिक स्थिति पर प्रभाव– किसी भी क्षेत्र का आर्थिक विकास सामाजिक परिवर्तन की आधारशिला है। आर्थिक विकास का सीधा सम्बन्ध हमारे जीवन धारण के लिए जरूरी साधनों से है। सामाजिक परिवर्तन के माध्यम से ही महिलाओं की स्थिति में काफी परिवर्तन आया है। ग्रामीण महिलाएं चाहे वे किसी भी धर्म की हो पहले की अपेक्षा स्वतंत्र हो गई हैं। महिलाओं को उच्च शिक्षा प्राप्त करने तथा जीविकोपार्जन के लिए नौकरी एवं व्यवसाय करने की पूरी स्वतंत्रता है। शहरी जीवन में आज पर्दा प्रथा काफी कम देखने को मिलती है। ग्रामीण महिलाओं में यह परदा प्रथा सबसे ज्यादा है परन्तु महिलाओं के बीच भी शहरों में विशेषकर पढ़ी–लिखी महिलाओं के बीच परदा की प्रथा में कमी है। विभिन्न सस्थांनों, स्कूलों, अस्पतालो एवं दुकानों आदि पर महिलाएं काम करते पाई जाती है। वर्तमान समय में शहरी एवं ग्रामीण घरों के तहत् महिलाएं पुरूषों के साथ बैठकर निर्णय लिया करती हैं। शहरों

के अर्न्तगत पितृसत्तात्मक मूल्यों का काफी ह्रास हुआ है। अब ग्रामीण परिवार में भी महिलाओं को विचार विमर्श करने का लगभग समान हक प्राप्त हो चुका है।

मानव जाति का प्रारम्भिक जीवन काल बहुत ही संघर्ष से व्यतीत हुआ, मानव अपनी समस्त शक्तियां एवं समय का उपयोग जंगली जीवों आदि से रक्षा करने एवं पेट भरने ती ही सीमित थे। धीरे–धीरे विकास ने अपनी गति पकड़ी और मानव भोजन का उत्पादन करने के लिए उत्पादक बन गया और एक निश्चित निवास पर स्थान करने लगा वह खेती–बाड़ी एवं पशुपालन के कर जीवन–स्तर को और विस्तार देने लगा। इस प्रकार मनुष्य का सामुदायिक जीवन शुरू हआ। इस विकास के क्रम से मनुष्य को कुछ राहत महसूस होने लगी और केवल जीवन की रक्षा एवं पेट भरने के स्थान पर वह प्रकृति की देन एवं प्रबल शक्तियों को चकित होकर देखने लग गया उसने बिजली की चमक, बादलों का गर्जन और तूफान जैसी प्राकृतिक लीलाओं से वह जहॉ भयभीत हुआ वहीं उसने यह भी अनुभव किया कि उसका जीवन और विकास प्रकृति पर ही आश्रित है। अतः पूर्ण श्रद्धा, भय एवं कृतज्ञता के भाव से वह प्रकृति के समक्ष नतमस्तक हो गया।

भारत का सर्वप्रमुख धर्म हिन्दू धर्म है, जिसे इसकी प्राचीनता एवं विशालता के कारण 'सनातन धर्म' भी कहा जाता है। ईसाई, इस्लाम, बौद्ध, जैन आदि धर्मों के समान हिन्दू धर्म किसी पैगम्बर या व्यक्ति विशेश द्वारा स्थापित धर्म नहीं है, बल्कि यह प्राचीन काल से चले आ रहे विभिन्न धर्मों, मतमतांतरों, आस्थाओं एवं विश्वासों का समुच्चय है। एक विकासशील धर्म होने के कारण विभिन्न कालों में इसमें नये–नये आयाम जुड़ते गये। वास्तव में हिन्दू धर्म इतने विशाल परिदृश्य वाला धर्म है कि उसमें आदिम ग्राम देवताओं, भूत–पिशाचों, स्थानीय देवी–देवताओं, झाड़–फूँक, तंत्र–मंत्र से लेकर त्रिदेव एवं अन्य देवताओं तथा निराकार ब्रह्म और अत्यंत गूढ़ दर्शक तक–सभी बिना किसी अन्तर्विरोध के समाहित हैं और स्थान एवं व्यक्ति विशेष के अनुसार सभी की आराधना होती है।

महिलाओं में धार्मिक रीतियों की सामाजिक स्थिति –

धार्मिक रीतियों को परिभाषित करना बहुत मुष्किल काम है। मुष्किल इसलिये नहीं कि इसका प्रयोग बहुत विस्तृत है, बल्कि इसलिये कि ये असंख्य मानव व्यवहार के अपरिवर्तनीय आधार का निर्माण करती हैं। कुछ प्रमुख व्यक्तियों ने रीति–रिवाजों को संगठित धर्म के दिनचर्या के रूप में स्वीकार किया है। कुछ लोगों ने इसे क्रिया के रूप में स्वीकार किया है। किन्तु इसके साथ

ही यह ध्यान रखना चाहिए कि सभी क्रियायें रीतियों या चलनों का रूप नहीं ले पातीं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि इसमें वह रीतियाँ हैं जो एक समूह के सदस्य अपने दिन प्रतिदिन की तात्कालिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये या पारस्परिक अन्तः क्रियाओं या अपने व्यवहारों को व्यवस्थित करने के लिये प्रयोग में लाते हैं। इनका प्रभाव सामाजिक समिति और संघों तक में विस्तृत रूप से फैला होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रत्येक समाज में व्यवहार की कुछ स्वीकृत प्रणालियां होती हैं जो समूह के सदस्यों द्वारा सम्पादित रस्मों या चलनों के रूप में अभिव्यक्त होती है। रस्में, जिनका विकास अनुभवों से होता है और जो परम्परा के द्वारा आगे बढ़ाई जाती हैं। इनमें परिवर्तन तो होता है किन्तु अति मन्द गति से। अतः हम कह सकते हैं कि इन रीति–रिवाजों की ऊपरी सतह ही परिवर्तित होती हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1.त्रिपाठी डा0 उमा – पंचायती राज एवं ग्रामीण विकास,

2.राठौर मधु – पंचायती राज और महिला विकास,

3.शर्मा प्रज्ञा – महिला विकास और सशक्तिकरण।

4.अजय आर. चौबे – पंचायती राज व्यवस्था और ग्रामीण विकास एवं समाज

5.कृष्णन कुट्टी – द इण्डियन ज्वाइन्ट फैमिली, विकली 1960

6.मनोरमा जौहरी – प्राचीन भारत में वर्ण व्यवस्था

7.देवकी जैन – इण्डियन विमेन

8.कुरूक्षेत्र

9.आउटलुक

10.प्रतियोगिता दर्पण

11.इण्डिया टूडे